Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, P-ISSN: 3049-172X, Volume 2 | Issue 2 | (Apr – Jun 2025)

# खुसरो के साहित्य में समाज

**डॉ० मनीष ओझा**
सहायक प्रोफ़ेसर, हंसराज महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

**सारांश :**

खुसरो का साहित्य तत्कालीन भारतीय समाज का जीवंत दस्तावेज़ है। यह वह समय है जहाँ विविध धर्मों, सम्प्रदायों, भाषाओं और संस्कृतियों का समागम हुआ। सात सौ वर्ष पहले का मध्यकालीन भारतीय समाज और उसकी संस्कृति को देखना हो तो अमीर खुसरो के साहित्य को विपुल कोष भंडार कहा जा सकता है। प्रचलित रीति-रिवाज़, बोली-बानी, वेश-भूषा, खान-पान, तीज-त्योहार, लोक विश्वास, लोक गीत-संगीत, दैनिक जीवन का रूप रंग, प्रतिदिन होने वाले क्रियाकलाप, नगर एवं ग्रामीण जीवन की झलक और ललित कलाएँ ; यानी संपूर्ण तत्कालीन भारतीय नगरीय जीवन की थाप तथा ग्रामीण जीवन की मधुर झंकार को उनके साहित्य में सुना जा सकता है।

**बीज शब्द :-** अमीर खुसरो, समाज, इतिहास, सामाजिक जीवन, सांस्कृतिक जीवन, भाषा, साहित्य, संगीत, लोक संस्कृति।

**शोध विस्तार :-**

किसी व्यक्ति का लेखन या उसके मस्तिष्क में विचारों का प्रस्फुटन उसके आस-पास की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों पर निर्भर करता है। समाज ही वह आधारभूत ढाँचा तैयार करता है जिस पर रचनाकार विचारों के द्वारा अपने मानस-पटल पर शब्दों के रूप तैयार करता है। चूँकि व्यक्ति समाज का हिस्सा है, तो उससे वह विमुख हो ही नहीं सकता। तत्स्वरूप समकालीन समय की छाप उसकी रचनाओं में दिखाई देती ही है। यही कारण है कि यदि किसी भी देश की संस्कृति को जानने की इच्छा हो तो उस देश का साहित्य उठा कर पढ़ लेना चाहिए। वह देश, उसका समाज और उसकी संस्कृति परत दर परत खुलती चली जाएगी। उस समाज की झलक वहाँ के साहित्य में कहीं न कहीं अवश्य दिखाई पड़ जाएगी।

साहित्य को समाज का दर्पण इसीलिए कहा जाता है क्योंकि साहित्यकार पर तात्कालिक परिस्थितियाँ प्रभाव डालती ही हैं। साहित्य में उस परिवेश की झलक मिलती ही है जिस समय में वह लिखा गया है। इसलिए सात सौ वर्ष पहले का मध्यकालीन भारतीय समाज और उसकी संस्कृति को देखना हो तो अमीर खुसरो के साहित्य को विपुल कोष भंडार कहा जा सकता है। प्रचलित रीति-रिवाज़, बोली-बानी, वेश-भूषा, खान-पान, तीज-त्योहार, लोक विश्वास, लोक गीत-संगीत, दैनिक जीवन का रूप रंग, प्रतिदिन होने वाले क्रियाकलाप, नगर एवं ग्रामीण जीवन की झलक और ललित कलाएँ ; यानी पूरी की पूरी तत्कालीन भारतीय नगरीय जीवन की थाप तथा ग्रामीण जीवन की मधुर झंकार को उनके साहित्य में सुना जा सकता है। अमीर खुसरो का व्यक्तित्व इतना

विशाल था कि उनकी पहुँच राजदरबारों के सुल्तानों से लेकर खानकाहों तक के सूफ़ी संतों तथा नगर के अमीर-उमरां से लेकर भारतीय ग्रामीण जीवन के आम जन तक थी। इनकी इसी व्यापक पहुँच के कारण ही उनके साहित्य से समाज का कोई भी पहलू अछूता नहीं रह सका। किसी न किसी रूप में भारतीय नगरीय जीवन,राजदरबार और ग्रामीण जीवन की पूरी झलक वहाँ दिखाई पड़ती है।

अमीर खुसरो का हिंदी साहित्य अपनी विविधता और व्यापक जन सुलभता के कारण जन सामान्य के जीवन में रचा-बसा है। उन्होंने साहित्य की विविध शैलियों और विधाओं में लेखन किया है। पहेलियाँ, मुकरियाँ, दो सखुन, निस्बतें, ग़ज़लें, कव्वाली तथा लोक गीतों की रचना की है। साहित्य की ये विविध विधाएँ आज हमारी धरोहर हैं जिन्हें हमने मौखिक व लिखित परम्परा से ग्रहण किया है। खुसरो ने अपनी रचनाओं में समकालीन समाज और जीवन की समग्र तस्वीर दिखाने का प्रयास किया है। समाज में रहने वाले लोग और उनके जीवन से सम्बंधित व्यवसायों का भी वर्णन उन्होंने अपनी रचनाओं में किया है। खुसरो ने सामाजिकों के भोजन, वस्त्र, आभूषण, मनोरंजन तथा लोक परम्पराओं आदि के बारे में लिखा है। अपने साहित्य में तत्कालीन समाज के विभिन्न वर्गों का उल्लेख किया है। जिनमें तुर्क, मंगोल, अफ़गान, हिंदू, सुल्तान, किसान, मज़दूर, कारीगर, कुम्हार, लोहार, नर्तक, वैश्य, सपेरा, धोबी, दर्जी, नाई, रंगरेज़, ग्रामीण महिलाओं की उपस्थिति मिलती है। उन्होंने इन विविध वर्गों के क्रियाकलापों का चित्र खींचते हुए ऐसी रोचक पहेलियाँ और मुकरियाँ लिखी हैं, जिनमें उनकी क्रियाओं और जाति की ओर इंगित मिलता है। यहाँ कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं :-

“माटी रौदूँ, चक धरूँ, फेरूँ बारम्बार

चातुर हो तो जान ले, मेरी जात गँवार।”[1]

- कुम्हार

“मीठी मीठी बात बनावे, ऐसा पुरुष वह किसको भावे

बूढ़ा बाला जो कोई आए, उसके आगे सीस नवाए।”[2]

- नाई

अमीर खुसरो ने अपनी एक पहेली में समाज के तीन वर्गों का नाम लेते हुए एक वस्तु का चित्रण किया है जिसकी निर्मिति में दो का योगदान है तथा तीसरा उसका भोग करता है। इस पहेली के माध्यम से खुसरो दीपक के सृजनकर्ता तेली व कुम्हार की उन जीवन स्थितियों की ओर हमारा ध्यानाकर्षण करते हैं जहाँ सुल्तान द्वारा उनका शोषण किया जा रहा है। सूँडनुमा दीपक की चोंच के माध्यम से जनसामान्य के जीवन का रस सोख कर अपने जीवन को समृद्ध और रौशन बना लेते हैं और मेहनतकश और सृजनकर्ता वह समाज स्वयं वंचित रह जाता है।

“पंसारी का तेल, कुम्हार का बरतन

हाथी की सूँड, नवाब की पताका।”

- दीपक

समाज में व्यवसाय की झलक और उन व्यवसायों से समाज में कितने वर्ग हैं ; इसकी भी पहचान खुसरो की रचनाओं में की जा सकती है। अपनी इन पहेलियों में किसी वस्तु या लोगों के चरित्र और उनकी विशेषताओं का वर्णन अत्यंत सहज और सूक्ष्म रूप से वह करते हैं। उस वर्ग के ख़ास मनोभावों को संजीदगी के साथ उन्होंने उकेरा है।

यूँ तो अमीर खुसरो की पहेलियाँ को मनोरंजन और आमोद-प्रमोद के रूप में देखा जाता रहा है परन्तु बिहारी के दोहों के समान यह देखने में सहज और सामान्य से लगने वाली बड़ी गंभीर और युक्तिसंगत बैठने वाली विधा है। बिहारी के दोहों के सन्दर्भ में कही गई उक्ति ‘देखन में छोटे लगे, घाव करें गंभीर’ इन पहेलियों पर भी सटीक बैठती है। साहित्यिक रचना के रूप में यह भले ही समान्य और अधिक भाव गाम्भीर्य को दर्शाने वाली न लगे, किन्तु इनकी पहेलियों में तत्कालीन लोकमानस और लोक जीवन की प्रतिध्वनियों को सहज ही सुना जा सकता है। इन पहेलियों और मुकरियों में इनकी कलात्मकता की सुंदर एवं सरस अभिव्यक्ति हुई है। तत्कालीन लोकमानस को खुसरो ने उस कोलाहलपूर्ण राजनैतिक परिस्थितियों में जैसा पढ़ा और अपनी चेतना में रचा बसा लिया उस समय में किसी भी रचनाकार ने ऐसा नहीं किया। सामान्य सी दिखने वाली इन पहेलियों में खुसरो का समाज और तत्कालीन लोकजीवन को हम आसानी से देख सकते हैं। विषयों की विविधता को हम इन पहेलियों के ज़रिये जान सकते हैं।

इनकी पहेलियों में सामाजिक जीवन की झलक के साथ आध्यात्मिक दर्शन का भी समावेश दिखता है। तत्कालीन समाज में सूफ़ी संत उन लोगों के लिए एक आस थे जिन्हें अपने समाज में ही स्वीकार्यता नहीं थी तथा जिनके लिए सूफ़ीमत एक आशा की किरण के रूप में आया था। चारों ओर कोलाहल और विषमताओं भरे समाज में सूफ़ियों के प्रेमतत्त्व से संबल पाने वाले समाज की भावनाओं की भी अभिव्यक्ति की झलक भी उनकी रचनाओं में मिलती है। प्रेम भावना की अभिव्यक्ति करने वाले उनके ‘दोहे’ एक ओर कवित्व की दृष्टि से खुसरो की महत्त्वपूर्ण कृति के रू में प्रतिष्ठित हैं और दूसरी ओर उनका सामाजिक महत्त्व भी है। यहाँ ऐसे कुछ दोहे द्रष्टव्य हैं :-

“ख़ुसरू रैन सोहाग की, जागी पी के संग

तन मेरो मन पिऊ को, दोऊ भए एक रंग।”[3]

----------

“सेज सूनी देख के, रोऊँ दिन-रैन

पिया-पिया कहती मैं, पल भर सुख न चैन।”[4]

खुसरो ने सामाजिक जीवन में आम जनता से जुड़ी उन विभिन्न वस्तुओं का भी ज़िक्र किया है, जो दैनिक जीवन में उपयोग में लाई जाती थी। तत्कालीन समाज में इन दैनिक उपयोग की वस्तुओं की उपस्थिति का पता चलता है। खुसरो की रचनाओं में आरी, चाक, पतंग, दिया, झूला, ढोल, पैजामा, चूड़ियों का ज़िक्र बार-बार आया है। यह वस्तुएँ तत्कालीन समाज के विभिन्न वर्गों की पहचान कराती हैं।

"श्याम बरन और दाँत अनेक, लचकत जैसे नारी

दोनों हाथ से खुसरो खींचें, और कहे तू आरी।"[5]

- आरी (बूझ पहेली)

"बाला था जब सबको भाया, बड़ा हुआ कुछ काम न आया

खुसरो कह दिया उसका नाँव, अर्थ करो नहीं छोड़ो गाँव।"[6]

- दिया (बूझ पहेली)

सामाजिक रीति-रिवाज़ों में प्रयोग आने वाले वाद्ययंत्रों का भी महत्त्व खुसरो ने ब-खू-बी पहचाना। शादी-ब्याह, जन्मोत्सव, सामाजिक संस्कारों में ढोल का होना अनिवार्य होता है। यह हमारी संस्कृति का अभिन्न हिस्सा माना जाता रहा है तथा यह ख़ुशियों का प्रतीक भी माना जाता है। अमीर खुसरों ने ढोल की उपस्थिति को अपनी इस मुकरी में कुछ इस प्रकार से दिखाया है :-

"वह आए तब शादी होय, उस बिन दूजा और न कोय

मीठे लागैं वाके बोल, ऐ सखी साजन, न सखी ढोल।"[7]

तत्कालीन समाज में धर्म और जाति व्यवस्था का बोलबाला था और समाज बँटा हुआ था। परन्तु खुसरो ने उस विभाजित समाज में भी अपने धार्मिक और वर्गीय भेद को भुला कर कुछ ऐसे आधार बनाने की कोशिश की है, जिससे कुछ पलों के लिए ही सही दोनों में वैमनस्य कम हो। उन्होंने इसके लिए समाज में प्रचलित प्रसिद्ध वस्तु 'छाता' का प्रयोग किया है। सौन्दर्य सबको आकर्षित करता है चाहे वह किसी भी जाति या धर्म का हो। सौन्दर्य की एक झलक उसे कुछ पल के लिए हर भेद भूलने पर मजबूर कर देती है। छाता को एक नारी के रूप में दिखाते हुए खुसरो लिखते हैं :-

"घूम-घुमेला लहँगा पहिने एक पाँव से रहे खड़ी।

आठ हाथ हैं उस नारी के सूरत उसकी लगे परी।

सब कोई उसकी चाह करे हैं मुस्लिम हिन्दू छत्री।

खुसरो ने यह कही पहेली दिन में अपनी सोच जरी।।"[8]

अमीर खुसरो ने तत्कालीन परिवेश की सामाजिक वस्तुओं के बारे में बताने के साथ-साथ उन वस्तुओं की विशेषताओं का भी अनोखे रूप रूप से ज़िक्र किया है। उन वस्तुओं के आलावा खुसरों ने उस समय के कुछ फलों का बेहतरीन अंदाज़ में उल्लेख किया है। जिसमें प्रकृति की जानकारी के साथ उसके सामाजिक सरोकार की भी पहचान होती है। उदाहरण के लिए अरहर के पौधे का जो ज़िक्र खुसरो ने किया है वो इस बात को दर्शाता है कि खुसरो तत्कालिक प्राकृतिक परिवेश तथा ऋतुओं तथा अनाज के पौधों जानकारी तो रखते ही हैं उसके साथ-साथ सामाजिक संबंधों की भी जानकारी रखते हैं।

"गोरी सुंदर पातली, केहर काले रंग

ग्यारह देवर छोड़ के, चली जेठ के संग।"[9]

- अरहर

अमीर खुसरो ने खेतों में होने वाले एक फल 'फूँट' का प्रयोग जिस अंदाज़ में किया है उससे उसकी सामाजिक दृष्टि के संबंध में हम सहज ही अनुमान लगा सकते हैं।

"खेत में उपजे, सब कोई खाय

घर में उपजे, घर खा जाए।"[10]

- फूँट

खुसरो का ऐसा अंदाज़ है कि एक वस्तु को पहचानने के लिए वह उसके रूप-स्वरूप का वर्णन करते हैं किन्तु तत्कालीन समाज की स्थितियों का बोध उससे स्वतः ही हो जाता है। समाज के ग़रीब और मज़दूर वर्ग की दयनीय स्थिति को खुसरो ने 'भुट्टा' को माध्यम बना कर कुछ इस तरह से प्रस्तुत किया है।

"बाल नुचे कपड़े फटे, मोती लिए उतार

यह बिपदा कैसे बनी, जो नंगी कर दई नार।"[11]

उच्च घराने से संबंध होने के बावजूद अमीर खुसरो का अधिक समय समाज के सर्वसाधारण लोगों के साथ गुज़रता था, जिसके कारण उनकी रचनाओं में मध्यवर्गीय समाज और उनकी वह स्थितियाँ दिखलाई पड़ती हैं, जिसमें किसान, मज़दूर, छोटे-छोटे व्यवसाय वाले लोग थे तथा इस वर्ग से सम्बंधित वस्तुओं पर भी इनकी दृष्टि गई। इसलिए इन्होंने किसान के खेतों में पैदा हुए फूँट, अरहर, भुट्टा आदि का वर्णन किया है तथा उसका संबंध सामाजिक जीवन से जोड़ा है। मज़दूर समाज का वर्णन करते हुए उनके द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली वस्तुओं आरी, डोली, नाव, कैंची, चिलम का वर्णन किया है।

मुसलमानों के आगमन के साथ ही समाज में चमड़े की माँग में वृद्धि होती हुई देखी गई क्योंकि सैनिक युद्ध में जाते वक़्त जूतों का प्रयोग किया करते थे, जो चमड़े के बने होते थे। खुसरो की कुछ पहेलियों और मुकरियों में जूता, चमड़ा और चमार शब्द भी कई बार आए हैं। उदाहरण के लिए :-

“नंगे पाँव फिरन नहीं देत, पाँव में मिट्टी लगन नहीं देत

पाँव का चूमा लेट निपूता, ऐ सखी साजन न सखी जूता।”[12]

खुसरो कालीन समाज में घूँघट और पर्दा का रिवाज़ प्रचलन में था और यह दोनों ही समुदायों में दिखता था, जिससे स्त्रियों के मान-सम्मान की रक्षा होती थी। अपनी एक निस्बत में खुसरो इस ‘पर्दा’ का ज़िक्र कुछ इस तरह से करते हैं :-

“दामन और अंगरखे में क्या निस्बत है ?”[13]

- पर्दा

खुसरो ने समाज की स्त्रियों के बीच में सौन्दर्य के प्रसाधन तथा श्रृंगार करने की कला का भी उल्लेख किया है। हम यह जानते हैं कि भारतीय समाज में प्रचलित ‘सोलह सिंगार’ की परंपरा को प्रभाववश मुसलमानों ने भी अपनाया था। खुसरो ने स्त्रियों द्वारा सौंदर्य के लिए प्रयोग में आने वाली वस्तुओं पर भी सूक्ष्म दृष्टि डाली है। उदहारण के लिए :-

“आदि कटे तो सबको पाले, मध्य कटे तो सबको घाले

अंत कटे से सबको मीठा, खुसरो वाको आँखों दीठा।”[14]

- काजल

----------

“नारी में नारी बसे, नारी में नर दोय

दो नर में नारी बसे, बूझे बिरला कोय।”[15]

- नथिया

भारतीय समाज में भांग, हुक्का और पान का महत्त्वपूर्ण स्थान था। इन वस्तुओं का प्रचलन समाज में पहले से चला आ रहा था और आज भी अनेक रस्मों-रिवाज़ और त्योहारों में इनका प्रयोग देखा जा सकता है। खुसरो कालीन समाज में भी यह प्रचलन में था। उनकी मुकरियों और पहेलियों में इसकी झलक देखी जा सकती है। वस्तुतः लोक समाज में पान और हुक्का शान, सत्कार और ठाठ-बाट की वस्तु समझी जाती थी और आवभगत में इसका प्रयोग सुलभ रूप में था :-

“हरा रूप है निज वह बात, मुख में धरे दिखावे जात

तीन वस्तु से अधिक पियार, जान देय सबहीं नरनार

हर एक सभा का रखे मान, चतुराई का ठाट पहिचान।”[16]

- पान

युग के परिवेश को तथा समाज के वातावरण एवं रहन-सहन को हम किसी रचनाकार की कृतियों से ही जान सकते हैं। तत्कालीन समाज में वेशभूषा किस प्रकार की थी तथा सौन्दर्य के प्रसाधनों में किन-किन चीज़ों का प्रयोग किया जाता था इन सभी को खुसरो ने अपनी रचनाओं में दिखाया है।

तात्कालिक समाज और संस्कृतिक विविधता की झलक जो उनके लोक गीतों में दिखती है वह आज सात सौ वर्षों के बाद भी ग्रामीण लोक जीवन में रची बसी हुई है। आज भी विवाह के उपरांत विदाई का चित्र और नवेली दुल्हन का क्रंदन वैसे ही सुनाई देता है जैसा तेरहवीं चौदहवीं शताब्दी में खुसरो ने देखा था। आज भी विदाई के समय बेटी के मन में कहीं न कहीं ‘काहे को ब्याही बिदेस’ की हूक उठती है और आज भी उस समय भाई पछाड़ खाकर कहीं गिरता है। आज भी ग्रामीण भारत में मिलने वाला पनघट का चित्र बहुत नहीं बदला है। वह वैसा ही है जैसा बरसों पहले खुसरो ने रचा। होली के रंग आज भी उतने ही टटके हैं जितने खुसरो के होली गीतों में हैं।

केवल पनघट का ही नहीं वर्षा ऋतु का भी हर्षोल्लास से पूर्ण ऐसा वर्णन खुसरो ने किया है जिसका अनुभव यथारूप आज भी किया जा सकता है। न केवल मानव समाज अपितु मानवेतर समाज पर भी उनकी दृष्टि गई है। उदाहरण स्वरूप :-

“आज घिर आई दई मारी घटाकारी

बन बोलन लागे मोर दैया री बन बोलन लागे मोर।

रिमझिम रिमझिम बरसन लागी छाय री चहुँ ओर

आज बन बोलने लागे मोर।।”[17]

ग्रामीण लोक में प्रचलित रीति-रिवाज़ों में ब्याही लड़कियों की विदाई का चित्रण खुसरो ने बख़ूबी ढंग से किया है। उन स्त्रियों के मनोभाव को, उनके कारुणिक दर्द को कवि ने हुबहू उकेरा है। विवाह के पश्चात् पहली बार मायके से ससुराल जाती हुई बेटी का क्रंदन जो कहर ढाता है उसे खुसरो ने अपने गीतों में मूर्त कर दिया है। विदाई के अवसर पर उनके ये गीत आज भी उत्तर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में सुनाई देते हैं–

“काहे को ब्याही बिदेस लखि बाबुल मोरे

हम तो बाबुल तोरे बागों की कोयल

कुहकत घर-घर जाऊं, लखि बाबुल मोरे

हम तो बाबुल तोरे खेतों की चिड़िया

चुग्गा चुगत उडी जाऊं, लखि बाबुल मोरे

यह अमीर खुसरो की विशेषता है कि सारी ज़िन्दगी बादशाहों और अमीरों के बीच बिताते हुए भी खुसरो ग्रामीण जीवन के दुर्लभ से दुर्लभ झांकी को भी उन्होंने चित्रित कर दिया है।

सांस्कृतिक मिलन के दोराहे पर खड़े होकर उन्होंने दोनों संस्कृतियों को एक सूत्र में पिरोने का कार्य किया है। खुसरो कालीन भारतीय समाज वह समाज था जहाँ दोनों संस्कृतियाँ अभी एक दूसरे के साथ संपर्क साध रही थी। समय के साथ-साथ दोनों ही संस्कृतियों में ऐक्य स्थापित होना प्रारंभ हुआ था। इस समन्वय का उदाहरण हमने अभी उनके गीतों और ग़ज़लों में देखा। दोनों ही समुदायों को उन्होंने प्रेमाधारित सूफ़ी मान्यताओं की डोर से जोड़ने का कार्य किया जिसमें वे सफल भी हुए। 'छाप तिलक तज दीन्हीं रे, तोसे नैना मिलाके' जैसी रचना दोनों ही समुदायों के मध्य सौहार्द्र की भावना बनाए रखने का ही एक सराहनीय प्रयास था।इस सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना के धनी लेखक ने दो विभिन्न समुदायों को एक सूत्र में पिरोए रखने के लिए सूफ़ियों के प्रेम संदेश के साथ-साथ संगीत को भी अपना माध्यम बनाया।

## निष्कर्ष:-

हम कह सकते हैं कि निश्चित ही खुसरो ने अपनी लेखनी के माध्यम से जो कार्य किया है वह अत्यंत सराहनीय है। अपनी रचनाओं तथा चेतन दृष्टि के माध्यम से तत्कालीन समाज की जो झलकियाँ उन्होंने प्रस्तुत की हैं, वह शायद कोई और कवि नहीं कर सकता था। तत्कालीन ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्थितियों को जिस सरल, सरस और रूचिपूर्ण अंदाज़ में उन्होंने प्रस्तुत किया है और तत्कालीन समाज का जो चित्र उकेरा है वह प्रशंसनीय है। तत्कालीन समाज में प्रयुक्त होने वाली विविध, प्रचलित बोलियों को उन्होंने अपनी रचनाओं में शामिल किया है, जिससे 'लोक' जीवंत हो उठा है।

## संदर्भ:-

1. ख़ुसरो की हिंदी कविता, ब्रजरत्नदास, पृष्ठ संख्या – 35
2. ख़ुसरो की हिंदी कविता, ब्रजरत्नदास, पृष्ठ संख्या – 37
3. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 53
4. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 131
5. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 57
6. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 57

7. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 101
8. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 59
9. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 73
10. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 77
11. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 79
12. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 99
13. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 106
14. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 84
15. अमीर ख़ुसरो और उनका हिंदी साहित्य, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या – 87
16. ख़ुसरो की हिंदी कविता, ब्रजरत्नदास, पृष्ठ संख्या – 29
17. भारत की महान विभूति अमीर ख़ुसरो, परमानन्द पांचाल, पृष्ठ संख्या – 82